महाराष्ट्र के सरकारी-अनुदान प्राप्त सेमी-इंग्लिश स्कूलों से क्या सीख सकते हैं?

अरविंद सरदाना

फ़ोटो: राजेश देशमुख

हाल ही में, आंध्र प्रदेश हाई कोर्ट ने सरकार द्वारा दिए गए आदेश कि सभी सरकारी स्कूलों को अँग्रेज़ी माध्यम बनाया जाए, को खारिज कर दिया है। अभिभावकों की आकांक्षाओं के नाम पर हम कई बार कुछ ऐसे विकृत विकल्प चुनते हैं, इसलिए जागरूक सार्वजनिक बहस की बहुत ज़रूरत है।

महाराष्ट्र में कई स्कूलों में सेमी-इंग्लिश स्कूलों की परिपाटी रही है। यह चलन शायद तीन दशकों से चला आ रहा है। ये स्कूल थे तो मराठी माध्यम, परन्तु माध्यमिक शाला में विज्ञान और गणित के लिए अँग्रेज़ी पाठ्यपुस्तकों का उपयोग करना आरम्भ कर देते थे। शुरुआत में यह परिपाटी, शहरी व तालुका के कस्बाई स्कूलों द्वारा अपनाई गई। इन्हें सरकारी अनुदान प्राप्त था और ये स्थानीय ट्रस्ट द्वारा संचालित किए जाते थे। वर्ष 2005 में राज्य ने कुछ सरकारी स्कूलों को अर्ध-अँग्रेज़ी यानी सेमी-इंग्लिश नीति अपनाने की अनुमति दी। आज यह चलन सरकारी ग्रामीण स्कूलों द्वारा भी अपनाया जा रहा है, जिस कारण बच्चे इन्हीं स्कूलों में टिके हुए हैं। प्राइवेट स्कूल की तरफ पलायन कम हुआ है।

दो विरोधाभासी परिदृश्य

दो दशक पहले के महाराष्ट्र के एक दूर-दराज़ स्थित तालुका की कल्पना करें, जहाँ न तो अभिभावकों को अँग्रेज़ी की पृष्ठभूमि थी, न अँग्रेज़ी किताबों से कोई परिचय। यहाँ के परिवेश में अँग्रेज़ी पुस्तकें या अन्य छपी साम्रगी उपलब्ध नहीं थी। ऐसी स्थिति में सेमी-इंग्लिश माध्यम सरकारी-अनुदान प्राप्त स्कूल से क्या तात्पर्य? इन स्कूलों में विज्ञान और गणित की पाठ्यपुस्तकें अँग्रेज़ी में होती हैं और अन्य विषयों की पाठ्यपुस्तकें मराठी में। अँग्रेज़ी एक अलग विषय के रूप में भी पढ़ाया जाता है। इन बच्चों का प्राथमिक शिक्षण मराठी में होता, जो कि उनकी घरेलू या क्षेत्रिय भाषा थी। महत्वपूर्ण बात तो यह थी कि कक्षा में मराठी का उपयोग किया जाता था चाहे समझाना हो, सवाल पूछना हो या बातचीत करना हो। शिक्षक पाठ्यपुस्तक अँग्रेज़ी में पढ़ते थे पर समझाते मराठी में। एक द्वि-भाषी सांस्कृतिक प्रक्रिया सब दूर स्वीकारी जाती रही, हालाँकि शिक्षण पद्धति अधिकांश समय पारम्परिक रहती थी। जब बच्चे अँग्रेज़ी पाठ्यपुस्तकों को पढ़ने का प्रयास करते तो वे अँग्रेज़ी शब्दावली से परिचित हो पाते और उनका अर्थ मराठी में समझते व सोचते।

ऐसे स्कूलों के कुछ पूर्व-छात्रों (जो आज मेरे सहकर्मी हैं) से बात करके यह कह सकते हैं कि इन पाठ्यपुस्तकों को पढ़ना उनके लिए आसान नहीं था। वे न केवल कठिन शब्दों के अर्थों को लिखने और शब्दावली को याद करने से जूझा करते थे, उनमें प्रश्नों का जवाब अँग्रेज़ी में देने का खौफ बना रहता था। परन्तु, पाठ्यपुस्तकों से जूझना उनके लिए ज़रूरी था। शिक्षकों के प्रयास द्वारा वे धीरे-धीरे इस नई भाषा से परिचित होते चले गए। अँग्रेज़ी में लिखना एक बड़ी चुनौती थी और कई सहकर्मियों के लिए आज भी है। परन्तु, विज्ञान या गणित की परिचित पुस्तक को आत्मविश्वास से पढ़ने में तेज़ी-से बढ़ोतरी हुई है।

जैसे कि मेरे सहकर्मी बताते हैं कि तीन से चार वर्षों के दौरान वे आत्मविश्वास से इस सांस्कृतिक बाधा को पार कर पाए कि वे अँग्रेज़ी में उच्च शिक्षण ले पाएँगे या नहीं। इस दौरान वे सहपाठियों और शिक्षकों के साथ तकनीकी बातचीत मराठी में करने के परिवेश को संजोते रहे। जो अँग्रेज़ी उन्होंने सीखी, वह धाराप्रवाह तो नहीं थी परन्तु संसार का सामना करने का विश्वास बना। सबसे अहम बात यह रही कि वे मराठी को मूल भाषा के रूप में उपयोग करने की ताकत का फायदा लेते रहे। मराठी के लिए उनका आदर वास्तविक और गहरा है। और आज भी बना हुआ है। उन्होंने भाषाविदों द्वारा सुझाए वे तरीके साबित किए कि बच्चे भाषा

फोटो: सुरेश पावरा

इंग्लिश भाषा सीखने में कहानी या कविता की किताबें प्रभावी भूमिका निभाती हैं। ज़रूरत होती है कि किताबें बच्चों की पहुँच में हों।

आसानी-से सीखते हैं, जब अर्थपूर्ण सन्दर्भ बन पाते हैं। घर या क्षेत्रिय भाषा में अर्थपूर्ण धाराप्रवाहिता से दूसरी भाषा को सीखने में मदद मिलती है। इस प्रक्रिया के साथ-साथ घर और क्षेत्रिय भाषा के लिए आदर बढ़ जाता है।

इस स्थिति की तुलना मध्य प्रदेश के एक शहर से करें। दो दशक पहले शहर में कुछ ही अँग्रेज़ी माध्यम स्कूल हुआ करते थे, और वे सभी प्राइवेट थे। कक्षा में हिन्दी में बोलने पर प्रतिबन्ध था। शिक्षक स्वभाविक रूप से हिन्दी में विषय-वस्तु को समझा नहीं सकते थे। बच्चों को भी कक्षा में हिन्दी में बोलने की छूट नहीं थी क्योंकि प्रशासकों और शिक्षकों का मानना था कि यदि हिन्दी में बोलेंगे तो वे अँग्रेज़ी बोलना नहीं सीखेंगे। वे कहते कि बच्चों पर अँग्रेज़ी में बोलने का दबाव डालना पड़ेगा। सभी पाठ्यपुस्तकें अँग्रेज़ी में हुआ करती थीं। हिन्दी एक विषय के रूप में पढ़ाया जाता था। कई स्कूलों में प्राथमिक शिक्षा भी अँग्रेज़ी में होती थी। कक्षा के बाहर, खेल के मैदान में या अध्यापक-कक्ष में बच्चे व शिक्षक, सभी हिन्दी में बोला करते थे परन्तु कक्षा में समझाने के लिए या पाठ्यपुस्तक पढ़ते समय या उसपर चर्चा करते वक्त शिक्षक हिन्दी का कम ही उपयोग करते। कक्षा में वार्तालाप की भाषा हिन्दी नहीं थी।

अक्सर, शिक्षकों की अँग्रेज़ी बोलने की क्षमता काफी सीमित थी। वे संक्षिप्त व्याख्या देकर अपना काम चलाते थे। कई बार हिन्दी उपयोग करने के लिए शिक्षक और विद्यार्थियों को प्रधानाध्यापक की डाँट भी सहनी पड़ती। कक्षा में हिन्दी का उपयोग होता, पर वह सीमित रहता और उसे अनुचित माना जाता। एक सहकर्मी याद करते हैं, कि जब वे एक ऐसे स्कूल के प्रधानाध्यापक थे, उन्हें 11वी-12वीं के कुछ वरिष्ठ शिक्षकों द्वारा चुनौती दी गई थी। शिक्षक हिन्दी का उपयोग खुलकर करते। उनके खयाल से हिन्दी में समझाना ही एक ऐसा तरीका है जिससे विद्यार्थी अवधारणाएँ समझ पाते और बोर्ड परीक्षा में पास हो पाते।

स्कूल में इस स्वाभाविक प्रवृत्ति को कई सालों तक दबाकर रखा जाता क्योंकि 'अँग्रेज़ी में ही बात करना है' की परिपाटी निभाना थी। इसके निहितार्थ गम्भीर हैं। शिक्षकों और विद्यार्थियों, दोनों के लिए पाठ में उत्तरों को 'कोष्ठक करना' एक सरल रास्ता था। शिक्षक अपने उत्तरदायित्व को पूरा कर पाते और बच्चे सही उत्तरों को याद कर लेते। ये बच्चे उच्च-मध्यम वर्ग के शहरी परिवारों के थे। उन्हें परिवार से या ट्यूशन का सहारा था। वे स्कूल के कार्यों से जूझकर खुद ही कुछ रास्ता निकाल लेते ताकि वे यथास्थिति से मुकाबला कर पाएँ। परन्तु, हिन्दी के लिए उनका सम्मान ज़रूर घट गया।

इस परिवेश में मध्य प्रदेश में अँग्रेज़ी एक आकांक्षापूर्ण भाषा के रूप में प्राइवेट स्कूलों में पढ़ रहे उच्च वर्ग के कुछ ही विद्यार्थियों तक सीमित रह गई है। हिन्दी में समझना और अर्थ लगाना, जोकि उनके लिए स्वाभाविक हो सकता था, उस पर प्रतिबन्ध-सा लग गया।

इसकी तुलना में महाराष्ट्र के स्कूलों ने एक सहज नज़रिया

अपनाया जो आकांक्षा के पहलुओं और अर्थपूण शिक्षण का मिश्रण था। इसके अतिरिक्त ये स्कूल शहरी और कस्बाई इलाकों के सरकारी-अनुदान प्राप्त स्कूल थे। उनकी पहुँच काफी विस्तृत थी। विद्यार्थियों का एक बड़ा हिस्सा जो उच्च शिक्षा से वंचित रह जाता, उनको मौका मिल पाया। उदाहरण के लिए एक सहकर्मी ने कहा कि उन्होंने बीस साल पहले सतारा ज़िले में अपने गाँव में ही प्राथमिक शिक्षा प्राप्त की थी। फिर माध्यमिक शिक्षण डोम्बिवली स्थित एक सेमी-इंग्लिश सरकारी स्कूल से प्राप्त किया। इस स्कूल की अच्छी प्रतिष्ठा थी और इसलिए वो आगे की पढ़ाई मोहाली के आयसर (IISER) में कर पाई। एक और सहकर्मी जो चन्द्रपुर ज़िले के नागभिड़ शहर की है, ने अपनी पढ़ाई सरकारी-अनुदान प्राप्त स्कूल में की और फिर आगे चलकर नागपुर में इंजिनियरिंग की।

एक अन्य सहकर्मी जो देश की एक प्रसिद्ध संस्था में पढ़ाते थे, ने लिखा, "मैं 11वीं-12वीं में ठाणे के ऐसे ही स्कूल में पढ़ा हूँ। वह एक अनुदान प्राप्त शाला थी जो एक चैरिटेबल ट्रस्ट द्वारा 1890 के दशक में स्थापित की गई थी। मेरी माँ, उनके भाई-बहन और मौसेरे भाई-बहन इसी स्कूल में पढ़े थे। 11वीं-12वीं में भी कक्षा की संस्कृति और भाषा मराठी थी। गणित और विज्ञान के विषयों को भी मराठी में ही समझाया जाता था, जिसके साथ अँग्रेज़ी शब्दावली उपयोग की जाती थी - शायद हाई स्कूल की सेमी-इंग्लिश को जारी रखते हुए। अधिकांश विद्यार्थी निम्न या निम्न-मध्यम वर्ग के थे। चूँकि यह 1996-1997 के दौरान की बात है, सभी या तो कम्प्यूटर इंजिनियरिंग या फिर इलेक्ट्रॉनिक इंजिनियरिंग करना चाहते थे।"

मध्य प्रदेश में सेमी-इंग्लिश स्कूल क्यों नहीं?

'साथ ही घर एवं पड़ोस में बोली जाने वाली भाषा के संज्ञानात्मक विकास में योगदान की बात को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं हो पाना और इस बात को समझने में असफल होना कि संज्ञान के स्तर पर विकसित भाषा-क्षमता अन्य भाषाओं में आसानी-से अनूदित होती रहती है।'

(राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र - 'भारतीय भाषा का शिक्षण', पृष्ठ v)

मध्य प्रदेश में अपनाई गई रणनीति द्विभाषी-दृष्टिकोण को स्वीकार नहीं करती है और हिन्दी को दूर रखती है। अँग्रेज़ी सीखने के बारे में यह विचार अब एक तरह का लोक ज्ञान बन गया है, हिन्दी पर प्रतिबन्ध लगाने की सोच दूर तक फैल गई है। इसका विकृत प्रभाव पड़ा है। यह सांस्कृतिक विचार काफी शक्तिशाली बनता जा रहा है और सभी स्कूलों के लक्ष्य को प्रभावित करता है।

फ़ोटो: राजेन्द्र देशमुख

लाइब्रेरी का कालांश - जिसमें पाठ्यपुस्तकों के अलावा और भी काफी कुछ पढ़ने को मिलता है।

उदाहरण के लिए, देवास शहर से 40 कि.मी. दूर, एक ग्रामीण प्राइवेट हिन्दी-माध्यम स्कूल, जिसने अपने आप को पिछले पन्द्रह सालों में स्थापित किया है, पर यह दबाव है कि वह अँग्रेज़ी माध्यम में परिवर्तित हो जाए। आसपास के परिवेश में अँग्रेज़ी कहीं भी मौजूद नहीं है, परन्तु उसे सीखने की आकांक्षा मज़बूत है। इस स्कूल पर अँग्रेज़ी माध्यम बनने का दबाव अमीर अभिभावकों और गाँव के बाहर बड़े अँग्रेज़ी-माध्यम स्कूल से आता है। इनमें से कुछ स्कूल यही परिपाटी अपनाते हैं, जिसकी हमने पहले चर्चा की है। स्कूल में हिन्दी बोलने पर प्रतिबन्ध है। इन विद्यार्थियों की घर की भाषा मालवी है पर क्षेत्रिय भाषा के रूप में सभी हिन्दी बोलते हैं। इस स्कूल के प्रधान अध्यापक अपने शैक्षणिक अनुभव को देखते हुए यह यकीन करते हैं कि अँग्रेज़ी एक विषय के रूप में पढ़ाना पर्याप्त है। परन्तु उन्हें चिन्ता है कि उनके कुछ विद्यार्थी जो अमीर घरों से हैं, तथाकथित बड़े प्राइवेट स्कूलों द्वारा लुभाए जा सकते हैं।

ये स्कूल बच्चों को गाँव से लेने-छोड़ने के लिए मिनी बस सुविधाएँ उपलब्ध करवाते हैं। गाँव की एक छात्रा जो इस बड़े प्राइवेट स्कूल में पढ़ती है, अपनी विज्ञान की

पाठ्यपुस्तक समझ नहीं पा रही थी क्योंकि वह उसका सन्दर्भ नहीं पकड़ रही थी। उसी गाँव के एक अन्य छात्र को प्राइवेट इंग्लिश स्कूल से निकालकर, आठवीं के बाद गाँव के हिन्दी-माध्यम स्कूल में डाल दिया गया। उसके माता-पिता को लगा कि वह स्कूल की पढ़ाई से जूझ नहीं पा रहा था। यहाँ, दोष बच्चे को दिया गया, स्कूल की अँग्रेज़ी पढ़ाने की पद्धति को नहीं।

इन स्कूलों का केन्द्रिय विचार है कि हिन्दी कक्षा-शिक्षण की भाषा नहीं होनी चाहिए और अँग्रेज़ी बोलने पर ज़ोर देना होगा। ये मानते हैं कि प्राथमिक कक्षा से ही अँग्रेज़ी को लागू करना चाहिए। एक अन्य गाँव में, वहाँ के कुछ नेताओं ने प्राथमिक शाला के प्रधान अध्यापक से चर्चा कर एक अनौपचारिक व्यवस्था बनाई। देवास शहर से दो शिक्षिकाओं को नियुक्त किया ताकि वे अँग्रेज़ी और गणित पढ़ाएँ और शिक्षण में अँग्रेज़ी पाठ्यपुस्तकों का उपयोग करें। इन अतिरिक्त शिक्षिकाओं को समुदाय द्वारा आर्थिक सहयोग दिया गया। प्रधान अध्यापक इस बात से राज़ी हो गए क्योंकि इस तरह से बच्चों को सरकारी स्कूल में रहने के लिए प्रेरित कर सकते थे। परन्तु चार महीने बाद इस सरकारी स्कूल के शिक्षक नाखुश थे। नई शिक्षिकाएँ ईमानदारी से पढ़ाती थीं परन्तु बच्चे इस प्रयोग से काफी विचलित हो गए। एक शिक्षिका ने कहा, "बच्चों की संख्याओं की समझ काफी कमज़ोर रही। मुझे अपने ही तरीके अपनाने चाहिए थे। हम काफी अच्छा करते हैं।" भाग्यवश यह प्रयोग जल्द ही समाप्त हो गया, भले ही उसके कारण कुछ और ही थे।

अँग्रेज़ी-माध्यम स्कूल कैसा होना चाहिए? यह आम-विचार बन रहा है कि ऐसा जहाँ हिन्दी को अलग रखना चाहिए। शहर के कई प्रतिष्ठित स्कूल इन मानदण्डों का पालन करते हैं। जो नहीं कर पाते उन्हें हीन भावना से देखा जाता है। शिक्षकों के स्वाभाविक विचारों को अलग रखा जाता है। उच्च वर्ग के ग्रामीण बच्चों को ऐसे स्कूलों में भेजा जाता है जहाँ पाठ्यपुस्तकें अँग्रेज़ी में होती हैं, हिन्दी पर प्रतिबन्ध होता है और कक्षा तीसरी से ही अँग्रेज़ी लागू कर दी जाती है। कक्षा के बाहर हम सभी बहुभाषी हैं - चाहे वह काम की जगह हो, बाज़ार हो, खेल का मैदान हो या शिक्षकों का स्टाफ रूम! परन्तु, जब स्कूल और भाषा शिक्षण की पद्धति की बात आती है, हम अस्वाभाविक रणनीतियों को अपनाते हैं। विशेषज्ञों की सलाह को अनदेखा कर देते हैं।

आश्रम शालाओं के लिए सेमी-मराठी स्कूल क्यों नहीं?

विरोधाभास तो यह है कि जहाँ महाराष्ट्र में अँग्रेज़ी सीखने की महत्वाकांक्षा के लिए एक मध्य-मार्ग अपनाया गया है वहीं आदिवासी

भाषाओं के प्रति नकारात्मक नीति अपनाई गई है। वही तर्क देते हुए, प्रबल भाषा यानी कि मराठी, को लादा गया है। वही सोच रही कि यदि बच्चों पर मराठी भाषा का दबाव न रखा जाए तो बच्चे मराठी नहीं सीखेंगे जो कि आगे के शिक्षण और नौकरी के लिए आवश्यक है। राज्य के आदिवासी इलाकों की आवासीय आश्रम-शालाओं और ज़िला परिषद स्कूलों में कई क्षेत्रिय भाषाएँ हो सकती हैं जैसे कि कोरकु, गोंडी, माड़िया, भिली व अन्य। इन विद्यालयों में शिक्षकों का एक बड़ा वर्ग बाहरी है, जिन्हें मुख्यधारा के मराठी भाषा क्षेत्र कहा जा सकता है। इन स्कूलों में भाषा नीति आदिवासी भाषाओं को लगभग प्रतिबन्धित कर देती है। एक शिक्षक ने टिप्पणी की, "अन्यथा, वे मराठी कैसे सीखेंगे।" यह वही तर्क है और उसका प्रभाव भी एक समान है। बच्चों की कक्षा का परिवेश उनके घर या क्षेत्र की भाषा को नकार देता है। आश्रम-शालाओं में हम पाते हैं कि कक्षा 1 और 2 के कुछ शिक्षक बच्चों की घर की भाषा का उपयोग करते हैं परन्तु वरिष्ठ शिक्षक नहीं करते। कुछ शिक्षकों ने ये आदिवासी भाषाएँ सीख ली हैं परन्तु वे उन्हें कक्षा के बाहर, खेल मैदान या हॉस्टल में अनौपचारिक बातचीत के लिए इस्तेमाल करते हैं। कक्षा की संस्कृति

'सामान्यत: आदिवासी इलाकों के स्कूलों के शिक्षक विद्यार्थियों या उनके अभिभावकों की भाषा से अनजान होते हैं। इतना ही नहीं, उड़ीसा में तो विद्यार्थियों पर प्रतिबन्ध है कि वे अपने घर की भाषा का स्कूली समय, सुबह 10.00 से शाम 4.30 तक के लिए प्रयोग न करें। कुछ ऐसी ही स्थिति उत्तर-पूर्व और दिल्ली में भी है! कई अध्ययनों से ज्ञात हुआ है कि आदिवासी स्कूलों में विद्यार्थी 5वीं में भी पाठ्यपुस्तक के किसी भी वाक्य को पढ़ने में असमर्थ हैं। अक्षर पहचान में और शब्द निर्माण में उन्हें कठिनाई होती है। शिक्षकों के लिए विद्यार्थियों की भाषा जानना महत्वपूर्ण नहीं माना जाता है। ऐसे में विशेष तरीके विकसित करने की ज़रूरत है, जो घर, पड़ोस व स्कूल की भाषा के बीच पुल का काम कर सकें। अधिकांशत: कक्षा में शिक्षक और विद्यार्थी में संवाद इकतरफा (वन वे) होता है जिसमें शिक्षक बोलता है, और विद्यार्थी सुनते हैं, विद्यार्थी समझ रहे हैं या नहीं, इससे कोई मतलब नहीं होता। बहुभाषिता और संज्ञानात्मक विकास को बढ़ावा देने के लिए जिसकी वकालत हम इस आधार पत्र के माध्यम से कर रह हैं, इसमें यह अनिवार्य करना होगा कि शिक्षक विद्यार्थियों की भाषा से अवगत हों।'

(राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र – 'भारतीय भाषाओं का शिक्षण', पृष्ठ 27-28)

फोटो: शिखा गुप्ता

में कभी नहीं। इस सिद्धान्त का अनुसरण इस हद तक हो गया है कि आदिवासी पृष्ठभूमि के शिक्षक जिनकी संख्या बहुत कम है, वे भी 'केवल मराठी में बातचीत' की प्रथा का पालन करते हैं।

आम तौर पर कक्षा में बच्चे चुप रहते हैं। वे बात नहीं करते। इसके पश्चात बच्चों पर वही सामान्य नीरस प्रथा लादी जाती है – वे बिना कुछ समझे पाठ्यपुस्तकों और गाइडों की नकल करते हैं।

राज्य के तीन अलग क्षेत्रों में किए गए एक आन्तरिक सर्वेक्षण में 371 आश्रम शालाओं से 66 आश्रम शालाओं का रैन्डम सैम्पल लिया गया। इस सर्वेक्षण में पाया गया कि कक्षा 6, 7, 8 के 15 प्रतिशत विद्यार्थी अपनी मराठी में लिखी विज्ञान पाठ्यपुस्तक पढ़ नहीं पाते थे और 37 प्रतिशत बच्चे काफी मुश्किल से पढ़ पाते थे और केवल कुछ भाग ही। 'केवल मराठी में बातचीत' की नीति के चलन से लगभग आधे बच्चे अर्थपूर्ण पढ़ाई से वंचित रह जाते थे।

हाल ही में सरकार ने आदिवासी भाषाओं में कक्षा 1 और 2 के लिए प्रवेशिकाएँ उपलब्ध करवाई हैं परन्तु वे क्षेत्र की आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करती हैं। हालाँकि, आदिवासी पृष्ठभूमि के कुछ शिक्षकों ने मराठी में निपुणता हासिल कर ली है परन्तु मुख्यधारा क्षेत्रों से बहुत कम शिक्षकों ने आदिवासी भाषाएँ अर्जित की हैं। भाषा की राजनीति भी स्पष्ट रूप से उभरती है।

'स्कूली शिक्षा के माध्यमिक या उच्चतर स्तर पर शिक्षा का माध्यम, धीरे-धीरे क्षेत्रिय भाषा या राज्य स्तरीय भाषा या हिन्दी या अँग्रेज़ी हो सकता है।'

(राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र, 'भारतीय भाषाओं का शिक्षण', पृष्ठ 16)

'बहुत समय तक यह विश्वास किया जाता रहा कि द्विभाषिता का संज्ञानात्मक वृद्धि और शैक्षिक सम्प्राप्ति पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है... दूसरी तरफ, हाल में हुए कुछ अध्ययनों ने दावा किया है कि द्विभाषिता, संज्ञानात्मक लचीलेपन व विद्वत् उपलब्धि में सकारात्मक रिश्ता है... इसलिए स्कूली पाठ्यचर्या में द्विभाषिता को प्रोत्साहित करने की ज़रूरत है। हमें यह मालूम होना चाहिए कि विविध भाषिक कुशलताएँ अवचेतन स्तर पर आसानी-से एक भाषा से दूसरी भाषा में रूपान्तरित हो जाती हैं और इसके लिए किसी भी प्रकार के अतिरिक्त प्रयास की ज़रूरत नहीं होती।'

(राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र - 'भारतीय भाषाओं का शिक्षण' पृष्ठ 21-22)

'यह संचरणीयता ही उन आधारों में से एक रही है जिसके कारण अँग्रेज़ी को अपेक्षाकृत देर से लागू करने की सिफारिश की जाती है। शिक्षा में भाषिक निपुणता जो बच्चे की अपनी भाषा में विकसित होती है, बाद में एक नई भाषा में स्वाभाविक रूप से चली जाएगी।

(राष्ट्रीय फोकस समूह का आधार पत्र - 'अँग्रेज़ी भाषा का शिक्षण' पृष्ठ 5)

सेमी-मराठी नीति तब कारगर हो सकती है जब पाठ्यपुस्तकें मराठी में हों परन्तु कक्षा में सभी व्याख्याएँ और बातचीत क्षेत्र की आदिवासी भाषा में हो। शिक्षकों को द्विभाषी होने के लिए प्रयास करना पड़ेगा। कक्षा का माहौल बच्चों की भाषा का होना चाहिए। हमें मौखिक संस्कृति का भरपूर उपयोग करना होगा। मराठी की तरफ बढ़ने की योजना लचीली और स्वाभाविक हो सकती है। शिक्षक यह कर सकते हैं और इसके कुछ उदाहरण भी मिलते हैं। आदिवासी भाषाओं को आदर देने से कक्षा की संस्कृति और बच्चों का मनोबल बदल जाएगा।

राज्य के अलग-अलग क्षेत्रों में काफी भिन्नता है। ऐसे कोई मानदण्ड से शुरुआत की जा सकती है कि भर्ती किए गए नए शिक्षकों को एक आदिवासी भाषा आना अनिवार्य है। जो शिक्षक फिलहाल पढ़ा रहे हैं, उनके लिए संक्षिप्त प्रशिक्षण आयोजित किए जा सकते हैं ताकि वे स्कूल के अनुसार उपयुक्त आदिवासी भाषा में कुछ हद तक निपुण हो सकें। इसके अतिरिक्त हर स्कूल के पास स्थानीय स्रोत होते हैं जिनका सृजनात्मकता से उपयोग किया जा सकता है। क्षेत्रों की विविधता को देखते हुए केवल एक मोटी रूपरेखा हो सकती है और इस बात पर ज़ोर दिया जा सकता है कि हर स्कूल अपने सन्दर्भ अनुसार सेमी-मराठी योजना बना ले। ऐसा करना सम्भव है जैसे कि कुछ पहली और दूसरी के शिक्षकों ने कर के बताया है। इस प्रकार के सार्थक

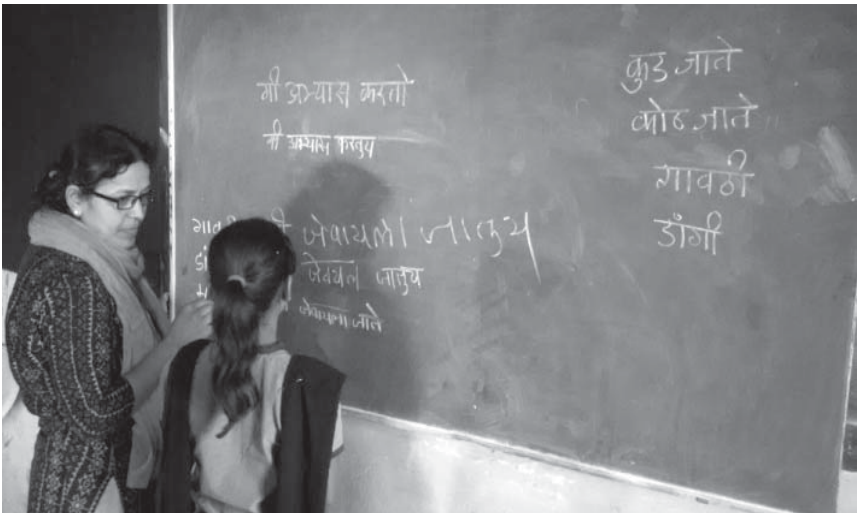

आश्रमशालाओं के साथ चल रहे प्रोजेक्ट के दौरान हमारे साथी कई दफा बोर्ड पर मराठी में वाक्य लिखकर बच्चों से उन्हें उनकी बोली में लिखने के लिए कहते थे। फिर इन वाक्यों को इंग्लिश में बोलने की कोशिश होती थी।

प्रयोग कई जगह हुए हैं और किए भी जा रहे हैं। (देखें आदिवासी अकादमी; जी.एन. देवी; साधना सक्सेना)

आदिवासी भाषाओं में बनी प्रवेशिकाओं का क्रियान्वयन विस्तार से किया जाना चाहिए और मराठी की तरफ बढ़ने की कार्य-योजना होनी चाहिए। हर स्तर पर कक्षा में क्षेत्रीय आदिवासी भाषा में बोलने और समझने को प्रोत्साहित करना चाहिए।

यह सिफारिश एन.सी.ई.आर.टी. फोकस समूह के आधार पत्र 2006 में दी गई है परन्तु उसे अनदेखा किया गया है।

एक बात जो याद रखना ज़रूरी है कि महाराष्ट्र के सेमी-इंग्लिश विद्यालयों में, घर की भाषा के लिए गर्व और आदर होने से विद्यार्थी स्वाभाविक रूप से अँग्रेज़ी भाषा का उपयोग कर पाए। जैसे कि भाषाविदों का दावा है कि एक भाषा में पकड़ और प्रवाह होने से दूसरी भाषा सीखने में मदद मिलती है। वही पकड़ दूसरी भाषा में भी बनने लगती है। आदिवासी इलाकों के लिए सेमी-मराठी पद्धति अपनाना कारगर हो सकता है। शायद आदिवासी संस्कृतियों को हीन भावना से देखने में बदलाव आ सकता है।

सार्वजनिक बहस का मुद्दा

मेरी सहकर्मी सतारा में अपने गाँव के विकास का ब्यौरा देती हैं। गाँव का

माध्यमिक और हाई स्कूल अब एक सेमी-इंग्लिश स्कूल में परिवर्तित हो रहा है। प्राथमिक विद्यालय अभी भी मराठी माध्यम है। स्कूल की कक्षाओं में मराठी का भरपूर उपयोग होता है। महाराष्ट्र के कुछ इलाकों में सेमी-इंग्लिश माध्यम या द्विभाषी माध्यम की शुरुआत सरकारी-अनुदान प्राप्त स्कूल के साथ हुई थी। इनकी लोकप्रियता के कारण सन् 2005 में महाराष्ट्र सरकार ने कुछ चयनित सरकारी स्कूलों में पाँचवीं कक्षा से सेमी-इंग्लिश माध्यम की शुरुआत की है। इस पहल को 2010 में विस्तारित किया गया ताकि बच्चे सरकारी स्कूल न छोड़ें।

कुछ स्कूलों को पहली कक्षा से ही अँग्रेज़ी-माध्यम बनने की अनुमति दी गई। यह त्रुटिपूर्ण है। यह नीति सेमी-इंग्लिश माध्यम स्कूलों की संज्ञानात्मक मज़बूती के खिलाफ है जो स्वाभाविक रूप से और मराठी के बलबूते पर सवार होकर अँग्रेज़ी की शुरुआत करते हैं।

दूसरों के साथ कदम मिलाने के लिए अन्य राज्य सरकारें भी 'पूर्ण अँग्रेज़ी-माध्यम' स्कूलों का दबाव डाल रही हैं। बाज़ार की ताकतें भी इसी दिशा में आगे बढ़ती हैं। यह बड़े व्यापार का क्षेत्र है।

यह, भाषा के प्रति हमें ओझल करने वाली नीति है। प्रारम्भिक अवस्था से ही पूर्ण अँग्रेज़ी से शुरू करना अनुचित है क्योंकि पहले क्षेत्रिय भाषा में बच्चों के आधारभूत कौशल विकसित होने चाहिए। प्रारम्भिक अवस्था में स्कूल का माध्यम क्षेत्रिय भाषा रखते हुए, अँग्रेज़ी को मौखिक रूप से शुरू किया जा सकता है। जैसे कि भाषाविद सुझाते हैं, उसके साथ परिचय करवाना चाहिए। भाषाओं का विकास एक-दूसरे की संगति में होता है। साथ-साथ परिवेश में अँग्रेज़ी पठन सामग्री प्रचुर मात्रा में उपलब्ध होना और आज के समय मौजूद मल्टीमीडिया का उपयोग करना फायदेमन्द होगा। अँग्रेज़ी के कृत्रिम द्वीप बनाने की बजाए क्षेत्रीय भाषा को आधार बनाते हुए अँग्रेज़ी सिखाना बेहतर होगा।

ऐसा क्यों है कि दो बिलकुल विपरीत विचार भाषा शिक्षण को प्रभावित कर रहे हैं? ऐसा क्यों है कि अँग्रेज़ी सीखने के लिए अलग-अलग रास्ते सुझाए जाते हैं?

हठधर्मी हुए बिना यह समझना कि 'अँग्रेज़ी के कृत्रिम द्वीप बनाना' एक पुरानी बहस का हिस्सा है और कुलीन स्कूलों के उदाहरण से उभरा है। यह विचारधारा इस सोच पर टिकी है कि एकभाषीयता या मोनोलिंग्युल तरीका सबसे श्रेष्ठ है। इस विचार के अनुसार अन्य भाषाएँ बाधा डालती हैं इसलिए या तो उन पर 'प्रतिबन्ध' लगना चाहिए या उन्हें एक महत्वहीन विषय के रूप में रखना चाहिए। वे जान-बूझकर अँग्रेज़ी के लिए कृत्रिम द्वीप बनाते हैं।

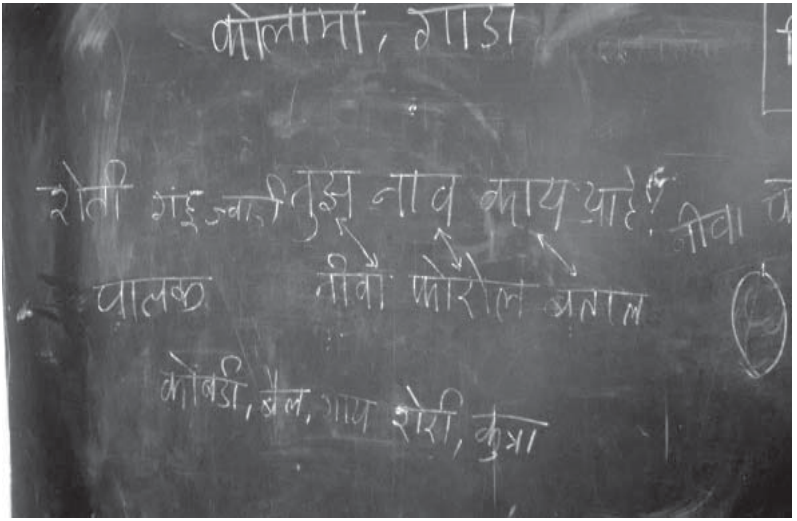

आश्रमशालाओं में कई शिक्षक भी सामान्य मराठी शब्दों के समकक्ष कोलामी शब्द बच्चों से पूछकर लिखते और बाद में इन शब्दों के लिए इंग्लिश शब्द बताते।

दूसरा विचार बहुभाषी मार्ग सुझाता है जो बच्चों की मातृ या क्षेत्रीय भाषा पर आधारित है। सभी भाषाओं के लिए एक समृद्ध परिवेश बनाएँ। इसके अलावा क्षेत्रीय भाषा को ध्यान में रखते हुए उसमें निपुणता हासिल करें ताकि उस पर सवार होकर इंग्लिश सीखी जा सके। ऐसी योजना बनाएँ जिससे बच्चे के सामाजिक सन्दर्भ के अनुसार वह अँग्रेज़ी सीखने की ओर कड़ी-दर-कड़ी बढ़ सके। (देखिए जेसिका बॉल की रपट)

एन.सी.ई.आर.टी. के राष्ट्रीय फोकस समूह के आधार पत्र इस विवाद को परिपेक्ष्य में रखते हैं।

दरअसल, सामाजिक सन्दर्भ एकभाषी अँग्रेज़ी स्कूलों को काफी प्रभावित करता है। महाराष्ट्र के कुछ विद्यार्थी जो सेमी-इंग्लिश विद्यालयों में पढ़े हैं, महसूस करते हैं कि उनके मित्र जो पूर्ण-अँग्रेज़ी-माध्यम स्कूलों में पढ़े हैं, कई बार उनसे बेहतर प्रदर्शन कर पाते हैं। परन्तु, जब उनसे हमने और गहराई से छान-बीन की तो उन्हें एहसास हुआ कि बेहतर करने की सम्भावना इसलिए अधिक है क्योंकि उन साथियों को घर पर सांस्कृतिक और आर्थिक सहयोग मिला है। कई विद्यार्थियों को घर पर ही अँग्रेज़ी से परिचय हो जाता है। कुछ को बहु-सांस्कृतिक परिस्थिति में अध्ययन करने के मौके मिलते हैं जहाँ वे अँग्रेजी में आसानी-से कुशलता हासिल कर पाते हैं। अक्सर अँग्रेज़ी

सीखने की राह में बहुत-से सामाजिक कारक कहीं-न-कहीं छिपे रहते हैं।

बहुभाषी शिक्षा को समर्थन देना समाज के लिए बेहतर है। यह किसी प्रकार से भी विद्यार्थी की आकांक्षाओं को बाधित नहीं करता और वे अँग्रेज़ी में उच्च शिक्षा हासिल कर पाते हैं।

यह समय है कि एन.सी.ई.आर.टी. के आधार पत्रों, जिनका पहले उल्लेख किया गया है, से आगे बढ़कर राज्य सरकार अपनी-अपनी समीतियों का गठन करें। इस समिति में भाषाविद, साहित्यकार, इतिहासकार आदि शामिल रहें - वे अध्ययन करें और सभी पक्षों की दलीलें सुनें। अपने सुझावों के साथ-साथ वे राज्य के लिए स्कूल में अँग्रेज़ी शिक्षण की कार्य-योजना का प्रस्ताव रखें। इसे राज्य में सार्वजनिक बहस का मुद्दा बनाएँ। कई बार यह तर्क देते हुए सुझाव खारिज किए जाते हैं कि वे व्यवहारिक नहीं हैं। इस स्थिति को समझकर बीच के रास्ते ढूँढ़ने होंगे जो कि राज्य सरकारों की ज़िम्मेदारी बनती है।

अरविन्द सरदाना: सामाजिक विज्ञान समूह, *एकलव्य* से सम्बद्ध हैं। एन.सी.ई.आर.टी. एवं अन्य राज्यों की पाठ्यपुस्तकों की निर्माण प्रक्रियाओं से जुड़ाव रहा है।

अँग्रज़ी से अनुवाद: अनु गुप्ता: *एकलव्य* के किशोरावस्था शिक्षण कार्यक्रम से सम्बद्ध।

आभार: *भागेश्री मेंषाकर, सयाली चोघले, भास बापट, अनीश मोकाशी और संदीप नाइक को अपने अनुभव और विचार साझा करने और कई लम्बे वार्तालापों के लिए एवं अनु को कुशल अनुवाद के लिए धन्यवाद।*

सन्दर्भ:

1. राष्ट्रीय फोकस समूह, 'भारतीय भाषाओं का शिक्षण', एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली, 2006.
2. राष्ट्रीय फोकस समूह, 'अँग्रेज़ी भाषा का शिक्षण', एन.सी.ई.आर.टी., नई दिल्ली, 2006.
3. Sadhna Saxena, 'Should children learn to Read and Write in their mother tongue', Language and Language Teaching, Issue 13, Vidya Bhavan Society, Udaipur, 2018
4. G N Devy, 'The Crisis Within', Aleph Book Company, New Delhi, 2017.
5. http://gndevy.in/inst.html
6. Jessica Ball, 'Enhancing Learning of Children from diverse language backgrounds: Mother Tongue based bilingual or multilingual education in the early years'. Analytical Review commissioned by UNESCO, Paris, 2011.